(IV) वैदिक काल के बाद के काल में भी वर्ण व्यक्ति प्रत्येक समूह के आनुष्ठानिक महत्व मात्र की ओर संकेत करता था। वर्ण व्यवस्था में गैर क्षत्रीय लोग भी क्षत्री हो सकते थे और शासक भी उदाहरण के लिए नंद एवं मौर्य गैर क्षत्रीय थे। शुंग राजा ब्राह्मण थे। इस प्रकार वर्ण व्यवस्था के सिद्धान्त को व्यवहारिक स्तर पर वैदिक काल के बाद भी कठोरता के साथ कभी भी लागु नहीं किया जा सका

(V) ऐसा समझा जाता है कि उत्तर वैदिक काल के भौगोलिक केन्द्र परिवर्तन के साथ वैदिक लोगों का साथ बहुत से गैर वैदिक कबीलों के साथ हुआ उनके साथ लम्बे आदान प्रदान के बाद एक मिला जुला समाज अस्तित्व में आया विवाह के कठोर नियम को लागु करने का उद्देश्य कबिले के पवित्रता को बनाया रखना था। इस प्रकार उत्तर वैदिक काल के वर्णों की अवधारणा अपने प्रकृति में बनावटी थी उदाहरण स्वरूप "अस्पृश्यता" की अवधारणा अनुपस्थित थी

Scanned with CamScanner

2 गोत्र प्रथा — उत्तर वैदिक काल में गोत्र प्रथा की स्थापना हुई — गोत्र का तात्पर्य उस स्थान से था जहां समूचे कुल की मवेशियां बांधे जाते थे कालान्तर में गोत्र कुल के आदी पुरुष से जुड़ गया और गोत्र विवाह की प्रथा प्रारम्भ हुआ।

3 परिवार → (i) उस काल में पितृसत्तात्मक परिवार अच्छी तरह से स्थापित हो चुका था तथा गृहपति को एक विशेष स्थान प्राप्त हो चुका था परिवार के पिता का अधिकार बढ़ता गया और वह अपने सम्पत्ति से पुत्र को भी वंचित कर सकता था।

(ii) उत्तर वैदिक कालीन पितृसत्तात्मक परिवार में पुत्र की लालसा स्वभावीक है। किन्तु यह झुकाव उस समय अपनी सारी सीमाओं को पार कर जाता है जब हम एतरेय ब्राह्मण में यह पाते हैं कि पुत्री ही समस्त दुखों का का स्रोत है तथा पुत्र ही परिवार का रक्षक है।

4 नारी की स्थिति →

(i) स्त्रीयों की स्थिती में उत्तर वैदिक काल में काफी गीरावट आयी

(ii) सभा में स्त्रीयां का प्रवेश निषेध होगया

(iii) मैत्रायणि संहिता में स्त्री को सुरा और पासा की तरह बुरा माना गया है।

(iv) यद्यपि समाज में एक पत्नि विवाह को ही आदर्श माना जाता था किन्तु ऐसा प्रतित होता है कि बहुपत्नि विवाह का प्रचलन था लेकिन सबसे पहली पत्नि को मुख्य पत्नि होने का विशेष अधिकार प्राप्त था

(v) लड़कियों का बीकना असम्भव नहीं था लेकिन उसे अच्छा नही माना जाती थी

3

पुरोहित वाद की एक नयी पद्धती का उदय हुआ क्योंकि जटील यज्ञ का सम्पादन विशेष पुरोहित ही करा सकते थे यहाँ तक की एक ही यज्ञ के दौरान विभिन्न चरण को पुरा करने के लिए अलग अलग पुरोहितों की आवश्यकता हो गयी थी

2 उत्तरवैदिक काल के देवता :→

(i) प्रारम्भिक वैदिक काल के दो महत्वपूर्ण देवता इन्द्र तथा अग्नि का महत्व कम हो गया। उनकी जगह उत्तर वैदिक देव मंडल में सृजन के देवता प्रजापति (स्रष्टा या ब्रह्मा) को सर्वोच्च स्थान मिला यह इस तथ्य का भी प्रतीक है कि कृषक समाज में स्रष्टा की काल्पनिक रचनाओं का कितना महत्व है

(ii) रुद्र जो ऋग्वेद के एक छोटे देवता थे अब एक महत्वपूर्ण देवता हो गये और बाद के रुद्र और शिव का समन्वय हो गया उत्तरवैदिक काल के रुद्र व पशुओं के देवता थे

(iii) विष्णु जो ऋग्वैदिक काल के एक गौण देवता थे उत्तर वैदिक काल के पालक और रक्षक देवता माना जाने लगे तथा उसे सृष्टि का संचालक माना जाने लगा

(iv) पूषण जो पहले पालतु पशुओं की रक्षा करते थे अब शुद्रों के देवता बन गये और इस प्रकार शुद्र वर्णों के अपने देवता भी बन गये।

(v) देवताओं की स्थिती में होने वाले परिवर्तन इस तथ्य के प्रतीक है कि कृषकार कबिलों के स्थायी रूप से बसने पर उनके चरित्र में भी किस प्रकार परिवर्तन हो गया

(vi) प्रारम्भिक वैदिक देवता जो प्राकृतिक विशेषताओं के प्रतिक थे उनके गुणो को धीरे धीरे त्याग किया गया और प्राकृतिक तत्व को देवता के रूप में देखना जटिल हो गया। उत्तर वैदिक काल के श्लोकों में वर्णित होने वाले विशेष देवता के प्राकृतिक तत्व को ढूंढ़ पाना कोई सरल कार्य न था।

3. पुरोहितो ने धर्म के यज्ञ वाले भाग का बहुत ही प्रसार किया जबकि भूत-प्रेत पिसाच, जादु मंत्रो और जादु विद्या के सार्वजनिक अन्धविश्वासो ने धर्म के स्थान प्राप्त करलिए। अथर्ववेद इन परम्पराओं से सम्बन्धित सूचनाओं का विशाल भंडार है और इसके अनेक ऐसे मंत्र रचे गये है जो रोग के प्रतिकार, स्वास्थ्य के प्रार्थना, घर और संतान की सम्पन्नता के लिए मंत्र सौहार्द्रता बनाने के लिए मंत्र, प्रेम और विवाह को सफल बनाने के लिए मंत्र ~~प्रेम~~ व पालतु पशु और खेत के सामूहिक इत्यादी से सम्बन्धित है।

4. समय के प्रवाह के साथ एकेश्वरवादी और अद्वैतवादी प्रवृत्तियां जो कि उत्तरवैदिक काल के अन्त के प्रधानता प्राप्त कर रही थी अब कुछ स्पष्ट हो गयी।

5 उत्तरवैदिक काल के मुर्ति पूजा के आरम्भ का आभास मिलता है इसके अलावा देवताओं के प्रतिक के रूप में कुछ वस्तुओं की पूजा भी प्रचलित हुई।

6 देवताओं की आराधना के भौतिक उद्देश्य पूर्व थे वे ही उत्तर काल में भी रहे

लेकिन आराधना की रीति के महान परिवर्तन आया। यज्ञ के बड़े पैमाने पर पशु बली दी जाने लगी और यज्ञ कर्मकाण्ड प्रधान हो गया। यज्ञ का फल बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता था कि यज्ञ में मंत्रों का उच्चार (यज्ञकर्ता) यजमान कितनी शुद्धता से किया है। इन सारे मंत्रो और यज्ञों का सृजन अंगीकरण और विस्तारण पुरोहितों ने किया था जो ब्राह्मण कहलाते थे ब्राह्मण धार्मिक ज्ञान विज्ञान पर अपना एकाधिकार समझते थे

* शब्दों का जादुई असर उत्तरवैदिक काल में व्यापक रूप से चल पड़ा था
* यद्यपि मिट्टी के कुछ खिलौने प्राप्त हुए हैं जिसके पशुओं का निरूपण है फिर भी मूर्ति पूजा स्पष्ट रूप से प्रचलित नहीं थी।
* यज्ञ की दक्षिणा में भूमि का दिया जाना उत्तरवैदिक काल में प्रचलित नहीं हुआ था
* अंतरंजी खेड़ा से कुछ हुताकार अग्निकुण्ड मिले हैं